उपसंहार

वैदिक देवताओं के अध्ययन का प्राथमिक स्रोत वैदिक संहितायें है। वैदिक संहिताओं का प्रमाणिक अभिज्ञान हेतु उनकी प्रत्येक सूक्तियों के लिए देवताओं का होना अनिवार्य है, क्योंकि वैदिक मंत्रों की पहचान उनके देवता, ऋषि और छन्द से होता है। वैदिक लोक जीवन में विविध देवताओं के अस्तित्व, विशिष्टता और अन्ततः सभी देवताओं में एक्यता के आधार पर मैक्समूलर ने वैदिक देवो–देवियों का वर्गीकरण बहुदेववाद, विशिष्टदेववाद तथा एकेश्वरवाद में वर्गीकृत किया , इसी प्रकार जर्मन विद्वान ज्वायनर ने क्षणिक देवता, विशेष देवता, वैदिक वैयक्तिक देवता के आधार पर वैदिक देवो–देवियों का वर्गीकरण किया। ब्लूम फिल्ड ने प्रागैतिहासिक देवता, पारदर्शी देवता, अपारदर्शी देवता तथा अमूर्त देवता के रूप मे किया और यास्क ने अन्तरिक्ष स्थानीय देवता (आकाश, अग्नि, नदियों) और पृथ्वी स्थानीय देवता के रूप में वैदिक देवा–देवियों का वर्गीकरण किया।

उपर्युक्त वर्गीकरण के अतिरिक्त वेदों में उल्लिखित सभी जड़ चेतन का दैवीकरण करके तत्कालीन विश्व के सभी जड़ चेतन की उपासना के विवरण प्राप्त होते हैं। जिसकी परम्परा भारतीय लोक जीवन में इतनी अधिक उदार हुयी कि तुलसी दास ने लिखा कि 'सियाराम मय सब जग जानी।'

करउ प्रणाम जोरि जुग पानी।

अर्थात् लोकदेवता के रूप में सीताराम को दोनों हाथों को जोड़कर उपासना वन्दना करने की व्यवस्था दिया। यह व्यवस्था लोक जीवन में अद्यावधि सम्मानित एवं आधृत मानी जाती है।

वैदिक काल में प्राकृतिक लोक देवियों की उपासना में उषा, सरस्वती, पृथ्वी, रात्रि, तारा, पृश्नि ,सरण्यू , यमी आदि देवियों का आख्यान भी लौकिक जीवन के समान प्राप्त होता है। एक समुदाय उन देवियों का भी है, जिनका उल्लेख परवर्ती सहिताओं में प्राप्त होता है, जिनमें प्रमुखः सिनीवली, राका, ककुभ, वाक्, हैमवती, इन्द्राणी, उमा इडा, अदिति,

दिति, भारती, पौरमासी आदि लोक देवियों तथा देवों की परम्परा का उद्‌भवन हमें वैदिक संहिताओं में प्राप्त होता है, जिसमें पृथिवी स्थानीय सभी जड़ चेतना, वृक्ष, वनस्पति, पर्वत, सरिता, गन्धर्व ,अप्सरा तथा अन्तरिक्ष और आकाश के ग्रह उपग्रह, नक्षत्र और ऋतु मास आदि को लोक जीवन में देव देवी के स्वरूप में श्रद्धा अर्पित करने का विवरण हमें प्राप्त होता है।

वैदिक परम्परा के पश्चात भारतीय लोक जीवन में एक नितान्त नवीन उत्क्रान्ति प्रस्तुत होती है। जो अपने पूर्ववर्ती लोक देवों देवियों से सन्तुष्ट नहीं था। क्योंकि परवर्ती वैदिक काल में देवी देवियों की की उपासना की पद्धतियों में यज्ञीय कर्मकाण्ड की जटिलताओं एवं क्लिष्टताओं की अपेक्षा एक सहज और सरल देव देवियों को लेकर श्रमण धर्म उपिस्थत हुआ। इन श्रमण धर्मो में जैन देव परम्परा ने बौद्धिक मनोवृत्तियों की अपेक्षा एक सरल मार्ग को प्रस्तुत किया और उसकी उपासना के लिए नवीन सरल मार्ग प्रस्तुत किया, जिसे लोक में 'मह' कहा गया। वैदिक इन्द्र वैदिक युग का देवाधिदेव था और अपने पटरानियों, तीन पार्षदों, सात सेनापतियों आदि के साथ स्वर्गिक सुख का उपभोग करता था, उसी उत्सव का परवर्ती रूप जैन धर्म में 'इन्दमह' कहा गया।

निशीथचूर्णी सूत्र में इन्द्र, स्कन्द ,यक्ष और भूत नामक 'महामहु' का उल्लेख किया गया है जो विभिन्न महीनों की पूर्णिमाओं को उत्सव के रूप में मनाया जाता था। लोक इस प्रकार के 'मह' के आयोजन में नृत्य, गीत, काव्य पाठ एवं इन्द्रजालिक प्रदर्शन होता हैं। इन्द्र देवता के नाम पर जिस 'इन्द्र मह' का आयोजन किया जाता था उसका विस्तृत वर्णन जैन ग्रन्थों में किया गया है। वासुदेव शरण अगवाल ने 'लोक धर्म' नामक ग्रन्थ में इन्द्रमह का विस्तृत विवरण दिया है। इन्द्रमह के अवसर पर बालिकाओं द्वारा अपने सौभाग्य के लिए बलि, पुष्प और धूप आदि से इन्द्र–देवता की पूजा की जाती थी, इस अवसर पर मद्यपान आदि खाद्य पदाथों का उपभोग आमोद–प्रमोद के साथ किया जाता था। इन्द्र देवता की उपासना पूजा का यह लोक पद्धति जैन ग्रंथों में वर्णित है।

इन्द्रमह की तरह महादेव के पुत्र स्कन्द (कार्तिकेय) का उत्सव भी पूर्णिमा को मनाया जाता था। भगवान महावीर के समय स्कन्दमह पूजा प्रचलित थी। महावीर स्वामी

जब श्रावस्ती पहुंचे तो अलंकारों से विभूषित स्कन्द प्रतिमा बनायी गई थी। लोक जीवन में देवताओं में इन्द्र, स्कन्द, नाग, रूद्र, शिव, मुकुन्द, वैश्रवण, यक्ष आदि के मह उत्सव आयोजित किये जाते थे। इन सभी देवताओं का स्वरूप लोक देवता के रूप में आयोजित किये जाते थे। इसी प्रकार वानमंतर गुह्यक आयोजित किये जाते थे। वानमंतर गृह्यक उत्सव में जन साधारण को भोजन कराया जाता था। यक्षायतन (चैत) की पूजा लोक में प्रचलित थी, भूमतह के प्रति अधिक विश्वास था और भूत प्रेत की लोक देव देवियों के रूप में पूजा प्रचलित थी।

श्रमण परम्परा में बौद्धदेव परम्परा भी प्रचलित थी। वैदिक युग के आराध्य देवों में ब्रह्मा का भी उल्लेख है। बुद्धकाल में ब्रह्मा की पूजा बन्द नही हुयी, बुद्ध ने अपने सम्बोधन में ब्रह्म पूजा का उदाहरण दिया है। इन्द्र को भी बौद्ध धर्मी देवराज मानते थे और बौद्ध ग्रन्थों में इन्द्र के लिए शक, वासव, मधवान आदि का उल्लेख मिलता है। बौद्ध जातकों में इन्द्र का विशेष वर्णन किया गया है जो हजारों आंखों वाला है। इन्द्र का विशद वर्णन प्राप्त होता है। जो लोक देवता थे। बौद्ध साहित्य में सूर्य और चन्द्र की पूजा वांछित वस्तुओं की प्राप्ति के लिए करते थे। लोक देवी के रूप में सिरिमा श्री की पूजा सभी वर्ग के लोग करते थे। भरहुत के तोरण द्वार में श्री को कमलासन पर आरूढ़ अंकन किया गया है। श्री की उपासना समुद्री नाविक अधिक करते थे क्योंकि 'श्री' नाविकों तथा यात्रियों का उद्धार करती थीं।

इसी प्रकार श्रद्धा, आशा , होत्रि आदि के साथ ही चार लोक पालों का भी उल्लेख मिलता है जिनकी पूजा देवताओं की भॉति की जाती था। भरहुत की वेदिका पर इनका चित्रण किया गया है। इसी प्रकार लोक जीवन में यक्ष, नाग, वृक्ष, सर्प आदि की पूजा देव रूप में की जाती थी। कहीं–कहीं देव रूप में वृषभ पूजा का उल्लेख मिलता हैं जातकों में पुण्य और पाप की जगह स्वर्ग और नरक का वर्णन प्राप्त होता हैं। आर्येत्तर जातियों में नाग पूजा का प्रचलन सर्प दंश के भय के कारण हुआ। विनय पिटक में उल्लेख है कि भगवान वुद्ध ने भिक्षुओं को निर्देश दिया कि आप लोग नाग के राजकुलों की पूजा करें। भारतीय लोक जीवन में नाग–पंचमी के अवसर पर नाग पूजा के दिन अवकाश रहता है।

बौद्ध धर्म में अश्वत्थ वोधिवृक्ष का जो प्रचलन हुआ वह विश्व में व्याप्त हो गया। वृषभ बौद्ध धर्म का प्रतीक बन गया और पशु पूजा के रूप में सारनाथ के सिंह स्तम्भ पर सिंह अश्व, हस्ति एवं वृषभ को राजकीय चिह्न के रूप में स्वीकार्य कर लिया गया। आधुनिक भारतीय लोकतांत्रिक गणराज्य में भारतीय नोटों (मुद्राओं) पर चारो पशुओं का अंकन सिंह शीर्ष सहित मुद्रित करा कर लोक जीवन के विनिमय का आधार बना दिया गया। क्योंकि बौद्ध धर्म पशुहिंसा का विरोधी था।

मनुष्य के रूप में जिस नर देवता की कल्पना की गयी उसी को अन्तरिक्ष अर्द्धांग रूप में नारी देवी की भी कल्पना अनिवार्य रूप से स्वीकार करनी पड़ी, क्योंकि सृष्टि के सृजन के लिए दो आवश्यक तत्व नर–नारी के संयुक्त एवं सक्रिय सहयोग से सृष्टि के सृजन का कार्य होता है। आज का विज्ञान भी इसे सकारात्मक तथा नकारात्मक तत्व के रूप में उर्जा के उत्पन्न होने का मूल कारण स्वीकार करता है। इसीलिए इन्द्राणी, ब्रह्माणी, पार्वती, सीता आदि की दैविक कल्पना में लोकदेवी के अस्तित्व को मानते हुए पूजा अर्चना आरम्भ कर दिया गया। लोक देवियों की उत्पत्ति का प्रथम ज्ञान हमें प्रागैतिहासिक काल के मध्य पुरा पाषाण काल के वेलनघाटी से प्राप्त हड्डी सें बने मातृदेवी को मानते है। उसके बाद मिट्टी की देवी की अनगढ़ मूर्तियां बनने लगी। पुराण में लोक देवी–देवताओं के रूप तथा गुणों का उल्लेख किया गया है। पृथ्वी सूक्त के अनुसार यह हमारी मातृभूमि अनेक प्रकार के जन को धारण करती हैं जो अनेक धर्मों को मानते हैं और विभिन्न प्रकार की भाषा बोलते हैं। उसी प्रकार लोक में प्रचलित धर्मों और जन विश्वास के आधार पर दुर्गा, अम्बिका, आदिति, अप्सरा, सरस्वती गंगा यमुना आदि देवियॉ हैं।

लोक देवी के रूप में मातृशक्ति का प्रथम नाम अम्बिका के रूप में वाजसनेयी संहिता तथा शतपथ ब्राह्मण में मिलता है। इन्हें लोगों में जन कल्याणकारिणी तथा सौभाग्य प्रदान करने वाली मंगलमय देवी के रूप में मानते हैं। बाद में इसको ब्राह्मण धर्म में स्वीकार कर लिया गया केनोपनिषद में एक प्रसंग में जिसमें उमा हैमवती प्रकट होकर इन्द्र वायु और अग्नि को यह उपदेश देती हैं कि अपनी शक्ति से एक तिनका भी नष्ट नहीं कर सकते हैं। शतपथ बाह्मण के अम्बिका सूत्र ग्रन्थ तक आते–आते शिव की पत्नी बन गयी।

जहां उनको भवानी, ईशानी रूद्राणी कहा गया। बौधायन धर्म सूत्र में इस देवी को स्पष्ट रूप से रूद्र की पत्नी कहा गया है। उनके लिए अनेक तर्पणों का विधान किया गया है। इसके साथ ही उन्हें एक विशेष जन समुदाय द्वारा विष्णु की शक्ति के रूप में मानने के कारण महा वैष्णवी कहा जाने लगा। महाकाली उनके उस घोर तथा रौद्र रूप का परिचायक है, जिसमें वे बाद में चण्ड, मुण्ड, शुंभ, निशुम्भ, महिषासुर, रक्त बीज राक्षसों की हन्ती के रूप में चित्रित किया है।

रामायण में क्रमबद्ध तथा विस्तृत रूप में दुर्गा अधिक पूर्ण तथा स्पष्ट रूप से सामने आती है। प्राचीन समय में दुर्गा मुख्य रूप से शिव की पत्नी के रूप में प्रतिष्ठित थी। इसलिए उनको पार्वती नाम देकर वर प्रदान करने वाली दयालु देवी के रूप में प्रस्तुत किया गया ।जो महाकाली की भाँति घोर तथा अशान्त नहीं हैं, जबकि महाभारत में उनको उग्र और विनाशकारिणी कहा गया है। अज्ञात वास में राजा विराट के वहां जाते समय धर्मराज युधिष्ठिर दुर्गा जी की जो स्तुति करते हैं। वह विन्ध्याचल में निवास करने वाली मद्य मांस एवं पशु से प्रसन्न होने वाली लोक देवी हैं। भीष्मपर्व में अर्जुन युद्ध में विजय के लिए दुर्गा स्त्रोत का पाठ करते हैं, उसमें उनके लिए काली, कपाली, उमा, शकम्भरी, भद्रकाली, महाकाली, चण्डी, कात्यायनी ,कराली, विजया कौशिकी, उमा, सरस्वती, सावित्री नाम का प्रयोग किया गया है।

पुराणों में हमें दुर्गा जी को स्तुति प्राप्त होती है, उसमें वह एक सौम्य तथा दयाशील देवी के रूप में है, जिनका सत्कार सारा विश्व करता है, जहां उन्हें जगमाता, सर्वशक्तियों की अधिष्ठात्री कहा गया है, वहीं उनको दानवों का संहारकर्ता कहा गया है। मार्कण्डेय पुराण उन्हे महामाया तथा परमब्रह्म की शक्ति मानता है, जो ज्ञानियों के मन को शान्त कर देती है। उन्हीं से चराचर संसार उत्पन्न होता है। वहीं अविद्या के रूप में विश्व को बंधन में बांधने का कारण है, वही परम विद्या के रूप में मोक्ष प्रदान करने वाली है, वह देवों के कार्य की सिद्धि के लिए उत्पन्न होती है। सभी देवियों को एक ही मातृशक्ति पार्वती से सम्बन्धित करने का प्रयास मार्कण्डेय पुराण ने किया हैं। देवों की प्रार्थना या पार्वती के शरीर से चण्ड, मुण्ड, महिषासुर जैसे राक्षसों का विनाश करने के लिए अम्बिका

का जन्म होता है। शरीर से निकल जाने पर पार्वती काली हो जाती है तो भ्रदकाली कहा गया है, चण्ड मुण्ड का बध करने से चामुण्डा कही गयी है। शक्ति पूजा का चरम विन्दु है। पार्वती परम् शक्ति होने के कारण तथा शिव की परमब्रह्म के रूप में मान्यता होने के कारण शिव और पार्वती हिन्दू धर्म में अद्वितीय महत्व रखते हैं।

अदिति को ऋग्वेद में देवों के समूह आदित्यगण की माता होने के कारण बहुत महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। वह श्रेष्ठ शक्तिशाली वीर पुत्रों की माता है, जिसमें मित्र वरूण अर्यमा शामिल है। अदिति का गृहिणी भी कहा गया है, जो उसके मातृत्व भाव को स्पष्ट करता है। वह ऋत् के संस्थापक व्रतों के अधिपति वरूण की माता होने के कारण उन्हें व्रतों की महिमा शालिनी माता कहा गया है। वह कष्टों, पापों, दुखों से मुक्ति दिलाती है तथा धन सम्पत्ति का दान, पशु की रक्षा , सौभाग्य तथा ऐश्वर्य को प्रदान करने वाली देवी है। उनसे हर प्रकार की रक्षा, मंगल तथा सुख की प्राप्ति तथा पापों का नाश करने के लिए प्रार्थना किया गया है।

रामायण में कहा गया है कि अप्सराएं देवों की प्रत्येक प्रसन्नता के अवसर पर गन्धर्वों के साथ नृत्य करती थी। भगवद्गीता के अनुसार समुद्र मंथन के समय अप्सरायें समुद्र से प्रकट हुयी थी। पश्चिम भारतीय, शिल्प शास्त्र में उनके 32 नामों तथा स्वरूपों का वर्णन हुआ है। पूर्वी भारतीय शिल्पों में इनकी संख्या 16 है। भरहुत में एक पट्ट पर अप्सराओं के समूह का अंकन मिलता है। कामदेव के मृत्यु के बाद देवों द्वारा आनन्द मनाने का अंकन है। मथुरा में अनेक अप्सराओं की प्रतिमा विभिन्न मुद्राओं में मिली हैं। उड़ीसा के सूर्य मंदिर में वाद्ययंत्र बजाते हुये दिखाया गया है। झांसी संग्रहालय में इन्द्र और अग्नि के साथ अंकित अप्सरा की मूर्ति दृष्टव्य है। खजुराहों के कन्दरिया महादेव मंदिर में ऑख बंद किये शांत मुद्रा में खड़ी अप्सरा का अंकन है।

भारतीय वाङ्मय में विद्या की अधिष्ठात्री के रूप में मॉ सरस्वती की आराधना करते हैं। ऋग्वेद में सरस्वती का उल्लेख नदी तथा देवी दोनों के रूप मे हुआ है। सरस्वती के तट पर यज्ञ होते थे और इसके नदी के जल की तुलना दूध से की गयी है। इस तरह मातृत्व की गरिमा प्रदान की गयी है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि पूजा में सरस्वती

नदी के जल का प्रयोग करने से पापों से मुक्ति मिल जाती है। वौ0गृ0 सूत्र में सरस्वती को विद्या वुद्धि और ज्ञान की प्रदात्री कहा गया है। उन्हें विष्णु की जिह्वा तथा ब्रह्म के मानस से उत्पन्न होने के कारण सरस्वती कहा गया है। सनातन गायत्री मंत्र की रचना कर सरस्वती वेदों की माता कहलायी।

विष्णुधर्मोत्तर पुराण में देवी के हाथ पुस्तक ,माला तथा वायेंहाथ में कमण्डलु का उल्लेख हुआ है। स्कन्द पुराण में शिव की शक्ति बताते हुए उन्हें नीली ग्रीवा से युक्त ऑखों एवं चन्द्राँकित जटा मुकुट से संयुक्त बताया गया है। गरुड़ पुराण में सरस्वती को श्वेत पद्मासन तथा उनके हाथ को वरद मुद्रा में होने का उल्लेख है। अग्निपुराण में अष्टभुजी प्रतिमाओं को धनुष, गदा, वीणा, चक्र, शंख, मूसल और अंकुश से युक्त बताया गया हैं। पद्म पुराण में उनके लम्बे कोमल हाथ, लिंग पुराण में पूरे शरीर पर श्वेत वस्त्रधारण करने का वर्णन है। वायु पुराण में देवी के दाये हाथ में अक्षमाला और वॉंये हाथ में पुस्तक का विधान तथा हंस का अंकन किया गया है।

गोकुल नन्द की पुत्री बलराम और श्रीकृष्ण की बहन देवी एकानंशा है, जो जगन्नाथ की तीन मूर्तियों में सुभद्रा की है। वासुदेव श्री कृष्ण के बदले एकनंशा को ले गये थे, जिसे कंस ने मारने का प्रयास किया, लेकिन कन्या आकाश में चली गयी और भविष्य वाणी किया कि हे मूर्ख तुझे मारने वाला व्रज में जन्म ले चुका है। इस कथा के अनुसार कौमार्य व्रत लेकर कौशिकी नाम से जीवित रही। वायु पुराण में कहा गया है कि शिलापट्ट पर पटकते ही कन्या कंस के हाथ से छूटकर आकाश में उड़ गयी और कंस को दुर्गा के रूप में त्रिशूल खड्ग, कमल लिए दिखायी दी,और कंस का भविष्य बताकर गायब हो गयी ।और वहीं देवी विन्ध्यवासिनी के नाम से प्रसिद्ध हुयी।

गंगा यमुना को हिन्दू धर्म में जल देवी के रूप में माना गया है। जिन्हें शिव अपनी जटाओं पर धारण करते हैं। नदियों में श्रेष्ठ गंगा को मानते हैं हुए इन्हें जगत्वन्द्या, भागीरथी, मन्दाकिनी, त्रिमाता, विष्णुपदी, जाहननुतया, अलकनन्दा नामों से शास्त्रों में पुकारी गयी है। यमुना को कालिंदी, सूर्यतनया, श्मनस्वास कहा गया है। इन दोनों का उल्लेख ऋग्वेद में तथा महाभारत में प्राप्त होता है। रामायण में इनको हिमालय पर्वत या हैमवत

की पुत्री बताया हैं। महाभारत में विवरण है कि हिमालय से चलकर गंगा समुद्र के मुख से सात धाराओं में बंट गयी, एक धारा प्रयाग में यमुना नदी से मिल गयी तथा तीन धारायें पृथ्वी, स्वर्ग, पाताल में गयी। इसलिए इसे त्रिपथगा कहा गया है।

वैदिक लोक देवी–देवताओं को ग्रहण करते हुए वैचारिक धरातल पर जिस नये विचार का जन्म तथा विकास हुआ उसे श्रमण धारा कहा गया। जैन ग्रंथ अंगविज्जा में ऐराणी, मेधा, कीर्ति, सरस्वती, विद्यासिद्धि आदि नामों से वर्णित है। उसी तरह बौद्ध साहित्य में श्रद्धा, हिरि, आशा, समुदाधि देवी सहित अनेक देवियों का उल्लेख है।

भारतीय वाङ्ग्मय में लोक जीवन दैवीय शक्तियों की शक्ति से संचालित होता है। शक्ति स्वयं मे स्त्रीलिंग है। जो देवी का द्योतक है। काल के दो पक्षों का विभाजन प्रकाश पक्ष (अजोरा) की देवी समयमाई तथा अन्धेरा पक्ष (अन्हेरिया) की देवी काली माई को माना है। इन देवियों को कौन सी वस्तु प्रिय है, स्थानीय स्तर पर उसके विधि विधान है। नाग और नागिन को भी देव–देवी माना गया हैं। स्थानीय देवी 'बहुलव' की पुत्र कामना से व्रत किया जाता है। पिड़िया माई जो कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा से शुरू होकर अगहन शुक्ल प्रतिपदा तक गोवर की मूर्ति बनाकर सत्रियों द्वारा पूजी जाती हैं। विहार एवं पूर्वी उ0प्र0 में छट्ठी (माता) का व्रत कार्तिक शुक्ल षष्ठी में किया जाता है। पूजा सामग्री डलिया में रखकर नदी के किनारे जाते हैं। सूर्य के डूबने तथा उगने पर उस पूजा सामग्री के साथ सूर्य की पूजा की जाती है। पुत्र कामना से यह व्रत किया जाता है।

आगमग्रंथ जैनियों का प्राचीन धर्म ग्रंथ है। जैन देव कोटियों में चौबीस जिनों की धारणा जैन धर्म की धुरी है। कर्म और वासना पर विजय पाने के कारण इनको जिन कहा गया है। जिसका शाब्दिक अर्थ विजेता है। चौबीस जिनों में ऋषभनाथ, अजित, सम्भव अभिनन्दन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपाशर्व, चन्द्रप्रभ, सुविधि, पुष्पदन्त, शीतल, श्रेयांस, वासु, पुष्य, विमल, अनंत धर्म, शांति, कुधुअर, मल्लि, मुनि, सुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्व एवं वर्द्धमान (महावीर) हैं। मध्यकाल में कृष्ण बलराम के अलावा राम, भरत चक्रवर्ती के नाम मिलते हैं। जो नेमिनाथ के चचेरे भाई है। नेमिनाथ के पिता कृष्ण के पिता वसुदेव के भाई समुद्र

विजय हैं। जैनग्रंथ में सरस्वती का उल्लेख मेधा एवं वुद्धि के देवता के रूप में किया गया है।

इसी तरह बौद्ध परम्परा में देवों की विभिन्न कोटियां हैं, जिसमें क्रमशः अमिताभ, ध्यानी बुद्ध, वैरोचन, पंचध्यानी बुद्ध, पद्मपाणि, बोधिसत्व, मैत्रेय, मंजुश्री, वज्रराग, रक्तलोकेश्वर, नीलकण्ठ, व्रज धर्म, लोकेश्वर आदि हैं।

वासुदेवशरण अग्रवाल ने मत्स्यपुराण के सांस्कृतिक अध्ययन में लोक प्रचलित 200 देवियों का उल्लेख किया है, पहली माहेश्वरी देवी से लेकर अंतिम ज्येष्ठा देवी तक। वायु पुराण में 49 देवियों का उल्लेख है। कश्यप संहिता में 31 कुषाण कालीन देवियों का उल्लेख हैं, जिसमें रेवती से लेकर मोहनी देवी शामिल हैं। रेवतीकल्प में ही 29 देवियों को उल्लेख बच्चों के देवी के रूप में हुआ है जिन्हे जातहारिणी देवी कहा गया है। इसमें सूत से लेकर अन्तिम देवी शम्बर है। भारतीय समाज में विभिन्न जातियों के लोग अपनी–अपनी देवियों की पूजा करते हं। जैसे अयस्करी (लोहार), कुविन्दी (कोली), तक्षिणी (बढ़ई), कुलाली (कुम्हार), पद्करी (चमार), मालाकारी (माली), रंजकी (रंगरेजी), गोपी (ग्वाला), सौन्वक (दर्जियों की) नेजिकार (धोवी) की देवी हैं। आज भी गांवों में इन जातियों के लोग अपनी देवियों की पूजा करते हैं।

भारत में वृक्ष पूजा बहुत प्राचीन है, जिसने धर्म के उच्च प्रकार को जन्म दिया है। यह उस असभ्य आदमी को अपील करती है जो जंगल से डरता है, क्योंकि वृक्ष में उत्पत्ति की आत्मा का दर्शन करता है और वह सभ्य आदमी को अपील करती हैं, जिसके लिए वृक्ष देवता का प्रतीक है। वृक्ष संसार की समग्र रूप से एक पूजा की वस्तु है। आज जिस अर्थ में हम व्यवहार करते हैं, वह हमारा जीवन क्रम धर्म से अनुशासित है। इसका अर्थ यही है कि शास्त्र और लोक दोनो ही इसे निरूपित करते हैं। लोकशास्त्र नहीं है, बल्कि शास्त्र भी लोक के प्रचलन को मान्यता देता है।

इस तरह लोक विविधता विस्तार तथा उसमें विद्यमान सभी अणु प्रकाशमान हैं। आकाश, पाताल, समुद्र, वृक्ष, पर्वत, सरोवर धातु सभी एक दूसरे के लिए माननीय पूज्यनीय वन्दनीय हैं। मनुष्य विभिन्न अवसरों पर इन्हें आदर सम्मान और श्रद्धा प्रकट करता हैं जो

लोक में देश काल की परिस्थितियों के अनुसार होता है। भारतीय साहित्य के अलावा कला में भी देव–देवियों के अंकन से उनकी प्रमाणिकता सिद्ध होती है। इन देव–देवताओं में त्रिमूर्ति का अंकन हुआ जिसमें ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव शामिल हैं। ब्रह्मा फैलते बढ़ते व्याप्त होते हुए बल के उपलक्षण मात्र हैं। ये विष्णु और शिव के बिना नहीं रह सकते। उन दोनों के बिना इसकी सत्ता का कोई आधार नहीं है। ब्रह्मा सृष्टिकर्ता, विष्णु पालनकर्ता, शिव संहार कर्ता हैं। तीनों के कार्य अलग हैं। फिर भी तीनों एक हैं।

सृष्टि का संहार करने वाले शिव ऐसे देवता हैं, जिनकी उपासना सैन्धव घाटी की सभ्यता से हो चुकी है। वैदिक काल में शिव रूद्र के नाम से प्रसिद्ध थे। अथर्ववेद में भव, शर्व, पशुपति, उग्र, महादेव, ईशान सहित सात नामों का उल्लेख हुआ है। शिव योगी और भोगी, राजा और गरीब के उपासक हैं। वर्तमान समय में शिव लिंग की उपासना सम्पूर्ण विश्व में की जाती है। लिंग उपासना शैव सम्प्रदाय का मुख्य अंग हैं। लिंग रूप की उपासना उतनी ही प्राचीन है जितनी की वृक्ष पूजा। सैंधव घाटी के शिव प्रमुख देवता हैं। मथुरा से प्राप्त शिव की चतुर्भुज प्रतिमा के सिर पर शिवलिंग का अंकन हैं। विष्णु पुराण में शिव लिंग के तीन भाग – भोग पीठ, भद्रपीठ, ब्रह्म पीठ है। श्रीमद् भागवत में सभी देवगण शिव की स्तुति करते हैं, जो लिंग रूप में पृथ्वी तथा आकाश में व्याप्त हैं। शिव लिंग प्रतिमा लखनऊ संग्रहालय में हैं।

सूर्योपासना की परम्परा विश्व की अनेक प्राचीन संस्कृतियों में प्रचलित रही है। प्रतिदिन पूरब में उदय होने वाले सूर्य आदि्मकाल से प्राकृतिक देवताओं में एक हैं। इनकी उपासना सम्पूर्ण भारत में की जाती हैं। कुषाण शासक कनिष्क की मुद्राओं पर मिइरो (सूर्य) का अंकन हैं। जो प्रथम शती ईस्वी की हैं। साम्बपुर में उदयगिरि, मथुरा में सूर्य मंदिर की स्थापना किया गया। इसके उपासक चन्दन का तिलक लगाते हैं। सूर्य सिन्दूर वर्ण, आभूषणों से सुसज्जित हैं, चार भुजाएं और शरीर पर कवच धारण करते हैं। खजुराहों के मंदिर में सूर्य की पांच फीट ऊंची प्रतिमा उदीच्य वेश भूषा में प्रदर्शित है। सूर्य प्रतिमाओं का विकास कुषाण काल, गुप्त काल, मध्यकाल में हुआ है। पश्चिमी पंजाब में चन्द्रभागा नदी तट पर मुल्तान में सोने की सूर्य प्रतिमा सबसे अधिक उल्लेखनीय हैं। बिहार के

शाहावाद ,मन्दसौर अभिलेख में सूर्य मन्दिर के प्रसंग हैं। दक्षिण भारत में प्राप्त प्रतिमओं मेंं सूर्य के हाथ कन्धो तक ऊपर उठे रहते हैं। अर्द्धविकसित कमल हाथों में तथा जघांए और चरण नंगे है।

महायान सम्प्रदाय की सर्वाधिक लोकप्रिय देवता ध्यानी बुद्ध, अमिताभ एवं उनकी शक्ति पाण्डरा से उत्पन्न बोधिसत्व अवलोकितेश्वर की मूर्ति है जो राजकीय बौद्ध संग्रहालय में सुरक्षित है। द्वितीय शताब्दी की लाल बलुए प्रस्तर से एक मूर्ति बोधिसत्व की कुशीनगर से प्राप्त हुई है। पांचवी शती की एक चुनार के बलुये प्रस्तर से निर्मित मिली है, जो सारनाथ से प्राप्त हुई है। इसी क्रम में कुशीनगर से प्राप्त माथाकुंवर की मूर्ति, वाराणसी से प्राप्त पद्मपाणि की काले प्रस्तर से निर्मित नवी शताब्दी की मूर्ति जो भारतीय कला भवन की अमूल्य निधि है।

जैन तीर्थकरों में ध्यानमुद्रा में अधिकांश मूर्तियॉ मिली हैं, जिनकी प्राचीनता हड़प्पाकाल तक जारी रही है। इनमें छठवीं शताब्दी ई0 की काशी से प्राप्त कायोत्सर्ग मुद्रा में निर्मित महावीर की मूर्ति, गोरखपुर से प्राप्त नवी शताब्दी की शांतिनाथ की मूर्ति, वाराणसी से प्राप्त 23वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ की मूर्ति ,जैन देव, देवियों में चक्रेश्वरी की मूर्ति देवगढ़ से प्राप्त हुई है, जो 862 ई0 में निर्मित थी, तथा धुविला संग्रहालय में नवगॉव में सुरक्षित है। दशवी शताब्दी ई0 की एक चक्रेश्वरी मूर्ति मथुरा संग्रहालय से प्राप्त हुई है। जैन धर्म के दोनो सम्प्रदायों में समान रूप से अजिता की मूर्ति देवगढ़ से ग्यारहवीं शताब्दी ई0 की है। इसके अतिरिक्त महाकाली यक्षी सुपार्श्व के साथ निरूपित मूर्ति देवगढ़ तथा खजुराहों से भी भी प्राप्त हुई है।

स्थानीय देवी देवताओं में दशवीं शती ई0 की एक काले प्रस्तर से निर्मित विष्णु की मूर्ति गोरखपुर जिले में स्थित असुरन पोखरा से भी मिली है। आजमगढ़ के बेलौली धाम से नवी शता0 की एक विष्णु मूर्ति समपाद स्थानक मुद्रा में मिली है। वाराणसी से प्राप्त वराह की मूर्ति, देवरिया के रूद्रपुर से प्राप्त विष्णु की चतुर्भुजी मूर्ति ,राजकीय उद्यान गोरखपुर से प्राप्त विष्णु की मूर्ति वेसाल्ट पत्थर से निर्मित प्राप्त हुई है। विष्णु के दस अवतारों से

सम्बन्धित एक मूर्ति सिकरीगंज से भी प्राप्त हुई है। इसी क्रम में अन्य स्थलों से भी विष्णु की अलग–अलग मूर्तियॉ प्राप्त हुई हैं, जो विभिन्न अवतारों से सम्बन्धित हैं।

वैदिक धर्म के पुनरूत्थान के काल में वैष्णव धर्म के साथ शैव धर्म भी भारत के विभिन्न भागों में फलता–फूलता रहा है। मध्यकाल के अभिलेखों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि, इस काल के शासकों ने शैव मन्दिर का निर्माण कराया, सृष्टि के संहारकर्ता के रूप में शिव की महत्ता पूर्व से ही ज्ञात होती है। पूर्वी उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों से शिवलिंग एवं शिव की मूर्तियॉ प्राप्त हुई हैं, इसी अनुक्रम में सरैया पोखरा से, 10वीं शताब्दी की काले प्रस्तर से बनी शिवलिंग प्राप्त हुई है। स्थानक मुद्रा में निर्मित शिव मूर्ति 8वीं शताब्दी की खैराडीह बलिया से मिली है। इसी क्रम में देवरिया से एक शिव मूर्ति प्राप्त हुई है जो लाल बलुये पत्थर से निर्मित है, एक और शिव मूर्ति उप धौलिया, गोरखपुर से प्राप्त हुई है, जिसमें उनकी अर्द्धांगिनी उमा का भी अंकन है। एक अन्य मूर्ति आजमगढ से भी प्राप्त हुई है, एक और मूर्ति 11वी शती0 ई0 की काले प्रस्तर से निर्मित जिसमें रावण कैलाश पर्वत उठाने का प्रयास कर रहा है,उसकी मूर्ति प्राप्त हुई है।

मानव शुरूआत से ही प्रकृति का उपासक रहा हैं। जीवन में प्रतिदिन घटित अनिवार्य प्राकृतिक घटनाओं के अन्तर्गत सूर्य की उपासना मानव के द्वारा किया जाता रहा है। सूर्य को रोग निवारक कहा गया है। इस क्रम में सूर्य प्रतिमा के निर्माण की सूचना विभिन्न स्थानों से प्राप्त मूर्तियों से होती है। पिपराइच गोरखपुर से प्राप्त बलुये काले प्रस्तर से निर्मित एक सूर्य मूर्ति जो समभंग मुद्रा में स्थित है। पूर्वी उत्तर प्रदेश में अधिक संख्या में सूर्य प्रतिमाओं का पाया जाना यह सिद्ध करता है कि यहॉ सूर्य की उपासना का प्रचलन प्रारम्भ से ही था।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में किसी कार्य का आरम्भ गणेश पूजा से होता है। पूर्वी उत्तर प्रदेश से अनेक मूर्तियॉ गणेश की भी प्राप्त हुई है। दोहरीघाट, मऊ से 12वीं शती0 की एक मूर्ति देवकली से प्राप्त नृत्यरत गणेश मूर्ति, वाराणसी से प्राप्त नवीं, दसवीं शताब्दी की गणेश मूर्ति, आठवीं शताब्दी की लम्बोदर गणेश की मूर्ति मिली है। महाराष्ट्र में गणेश पूजा विशेष रूप से लोकप्रिय है। भारतीय कला साहित्य एवं मुद्राओं में कार्तिकेय का महत्वपूर्ण

स्थान है। इस देवता की भी अधिकांश मूर्तियॉ पूर्वी उत्तर प्रदेश के अलग–अलग स्थानों से प्राप्त हुई हैं, जिनमें 11वीं शताब्दी की वाराणसी से प्राप्त गुप्त युगीन कार्तिकेय मूर्ति, गोसाईपुर वाराणसी से षड्मुखयुक्त कार्तिकेय मुर्ति प्राप्त हुई है।

पूर्वी उत्तर प्रदेश से शक्ति की प्रतीक विभिन्न देवियों की मूर्तियॉ मिली हैं, जो सरस्वती, महिषासुर मर्दिनी, वैष्णवी, वाराही, चक्रेश्वरी, मातृदेवी के नाम से प्रसिद्ध हैं, जो विभिन्न स्थलों से प्राप्त हुई हैं। गोरखपुर से 9वीं शताब्दी की प्राप्त महिषासुर मर्दिनी की मूर्ति, 12वीं शताब्दी की बलुये प्रस्तर से निर्मित महिषमर्दिनी की मूर्ति वाराणसी से प्राप्त हुई है। इसी भॉति दूसरी शताब्दी की निर्मित एक मातृ देवी की मूर्ति कोपिया, बस्ती से मिली है। 11वीं शदी की बलुये प्रस्तर से निर्मित एक वैष्णवी मूर्ति वाराणसी से मिली है। गोरखपुर से ही 11वीं शताब्दी की प्रस्तर से बनी सरस्वती की एक मूर्ति मिली है, जो वीणा के तारों को झंकृत करती हुई, प्रदर्शित है। द्वितीय शताब्दी की गजलक्ष्मी की एक प्रतिमा को डॉ0 वी0एस0 अग्रवाल ने पृथिवी माता माना है। ऋग्वेद में गजलक्ष्मी की चर्चा की गयी है, 12वीं शताब्दी की काले ग्रेनाइट प्रस्तर से निर्मित ललितासन मुद्रा में सरस्वती की मूर्ति प्राप्त हुई है। बसन्त पंचमी के अवसर पर सरस्वती पूजा का आयोजन बड़े ही धूमधाम से किया जाता है।

शांतिनिकेतन ,कलकत्ता के उड़िया विभाग के अध्यक्ष कुंज बिहारी दास ने ग्राम्य गीत के अर्थ को बताया है कि यह उन लोगों के जीवन की अनायास विचार है, जो सुसंस्कृत होते हुए भी आदिम अवस्था में रहते हैं। भोजपुरी क्षेत्र का सम्पूर्ण जनजीवन धर्म से ओतप्रोत है। भोजपुरी जनमानस के मूल धर्म क्षेत्र में देवी–देवताओं की उपासना बड़े ही सम्मान के साथ की जाती है, जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण गाये गये गीतों से होता है, जिससे उनकी धार्मिक स्थिति का पता चलता है। प्राकृतिक देव मण्डल में सूर्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण पूज्य देवता के रूप में है। जिसमें शक्ति तथा प्रकाश देने की क्षमता विद्यमान है। गायत्री मंत्र में सूर्य की शक्ति सविता से बुद्धि को प्रेरित करने की प्रार्थना की गयी है। भोजपुरी के क्षेत्र में सूर्य भगवान को 'सूरूज' भगवान कहा गया है। पुत्र प्राप्ति के अवसर पर पुत्र के पिता की माता (अइया) गीत– गाती हैं –

भइले सुरूजवां के साज हो।

त कोखिया सुफल बइल हो,

ललना के देखिके सुरतिया,

हमार नयना जुड़ाइल हो।।

भोजपुरी लोक जीवन में सूर्य को अर्घ्य देने की प्रथा प्रचलित है। सूर्य पूजा की परम्परा वेद के गायत्री मंत्र में सशक्त रूप में वर्णित है। सोहनी के गीतों में सूर्य की उपासना तिल और चावल से करने की बात कही गयी है।

वैदिक ग्रन्थों में चन्द्रमा का महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय प्रतिमा विज्ञान और मूर्तिकला का सबसे कमजोर पक्ष है कि चन्द्रमा की मूर्ति निर्माण के विषय मे कोई विवरण नहीं मिलता है। लोक जीवन में चन्द्रमा को विभिन्न व्रतों के माध्यम से पूजा जाता है। बौद्ध साहित्य में इस बात का उल्लेख है कि शरद पूर्णिमा का पर्व अमृत के लिए मनाया जाता है। भादो की शुक्ल पक्ष की चतुर्थी को (करवा चौथ) का व्रत महिलायें करती हैं, जिसमें चन्द्रमा के दर्शन के वाद ही उनको अर्घ्य देकर ही भोजन करती हैं।

भोजपुरी समाज में अग्नि पूजा प्रायः प्रत्येक मांगलिक अवसर पर की जाती है। अग्नि का सम्बन्ध जीवन के अनन्तकाल तक जुड़ा होता है। सम्पूर्ण भारतीय जीवन धर्म से अनुप्राणित विभिन्न पौराणिक देवताओं की कथा और लीला का आदर्श व्यक्तित्व के रूप में पूजा प्रचलित है। ग्राम्य गीतों में विभिन्न अवसरों पर इन देवताओं की उपासना एवं महिमा का वर्णन गीतों के माध्यम से किया जाता है।

रघुवर जी से वैर करोना।

सतयोजन मरजाद सिन्धु के ना केहू लघि सकें।।

ताहि विधि उतर रघुनन्दन, वानर सैन केहू जीत सकेना।।

ग्रामीण जनमानस में सर्वाधिक वल, वीरता, बुद्धि और रामसेवक हनुमान जी की आराधना मंदिर में बैठकर हनुमान चालीसा के पाठ से करते हैं, जिनमें उनकी आकृति,

स्वभाव, गुणवर्णन सरल भाषा में किया जाता है। राधा–कृष्ण की कथा का गुणगान गीतों के माध्यम से भी किया जाता है। ग्राम्यगीतों में शिवजी के विभिन्न रूपों का वर्णन करते हुए भोजपुरी जनमानस अपने सर्वाधिक भोले, दानी, प्रसन्नचित देवता (शिव) की उपासना ग्राम्यगीतों के माध्यम से करते हैं।

भोजपुरी क्षेत्र में शिव की उपासना उनके साहचर्य गणेश गौरी, उनके वाहन, वृषभ और नन्दी के प्रति धार्मिक श्रद्धा विद्यमान है। विष्णु अपने अलग–अवतारों के कारण लोक जनमानस में धार्मिक श्रद्धा के केन्द्र के रूप में है। जिनकी उपासना सोहर गीत, अन्य गीतों के माध्यम से की जाती है।

ग्राम्य देवताओं की उपासना के साथ ही ग्राम्भ्य देवियों की उपासना का प्रचलन है, डॉ0 वी0एस0 अग्रवाल ने पुराण के आधार पर दो सौ देवियों की सूची प्रकाशित की है जो भोजपुरी क्षेत्र में धार्मिक विश्वास के रूप में लोक पूजित है। इनकी उपासना ग्राम्य में गीतों के माध्यम से (पचरा) किया जाता है। एक गीत में मॉ दुर्गा को प्रसन्न करने के लिए भक्त प्रार्थना करता है –

जागु–जागु देवियॉ जागु दुरूववा।

जागु दिनवा नाथ हो,

जागु–जागु के डिहऊ

तोहरे कइले वानी आस हो।।

ग्राम्य देवियों में काली सर्वाधिक प्रसिद्ध देवी है, जो हर गॉव में पायी जाती है। इसके अतिरिक्त समयमाई, बुढ़ियामाई, तरकुलहा देवी, लेहड़ा देवी, डीह देवी एवं देवस्थान की उपासना पूजा प्रचलित है, जो विभिन्न गीतों के माध्यम से की जाती है। देवी की उपासना रक्षा, सुख शान्ति, विपत्ति रोग के निवारण एवं समृद्धि खुशहाली आदि की प्राप्ति के लिए की जाती है। चेचक रोग के निवारणार्थ शीतला माता की पूजा भी लोक में लोक देवी की पूजा के रुप में प्रचलित है। भूत–प्रेत आत्माओं आदि के प्रसन्न करने के लिए लोक जीवन में यज्ञ ,हवन, पूजन, अर्घ्य, फल–फूल ,दूध–दही का अर्पण किया जाता है और कुछ

देवी–देवताओं को बलि भी दी जाती है। देवी, देवताओं की उपासना एवं प्रसन्न करने के लिए व्रतों का विधान भी लोक जीवन में मौजूद हैं। इच्छित वस्तु की प्राप्ति, पुत्र की प्राप्ति हेतु लोग जीवन में विभिन्न व्रतों को लोक आदर, श्रद्धा–भाव एवं स्नेह रूप में करते हैं। व्रतों के पूर्ण होने में हवन जप आदि क्रिया कलापों का भी लोक जीवन में बड़ा महत्व दिखायी देता है।

उपासना के क्रम में देवी को प्रसन्न करने के लिए हवन, जप, होम सामग्री का प्रयोग किया जाता है, जबकि देवो को प्रसन्न करने के लिए पुष्प में अड़हुल, गुलाब, चम्पा, वेला आदि सामग्री का प्रयोग लोकजीवन में लोग करते हैं।

आरे आमे के पलउआ ए देवी

गइया केरा घीव हो,

भूखल वाभन जेवली नगन के वस्तर हो,

और तुलसी के दियरा वरवली, रमइया जी के पवली हो।

दान पुण्य करना हमारी भारतीय संस्कृत की परम्परा रही है। ऐसा लोक विश्वास है कि दान पुण्य करने से मुक्ति मिलती है। भगवान को प्रसन्न करने के लिए दीन–दुखी गरीब लोग भजन करते हैं, जो उनकी पूजा की एक पद्धति है, जो गीतों के माध्यम से ही किया जाता है। इसी तरह अलग–अलग संस्कारों में लोग लोक गीतों का प्रयोग करते हैं। विवाह संस्कार में घर की नारियॉ विवाह गीत गाती हैं। गवना के समय गवना के गीत नारियॉ समूह में गाती हैं। षोडश संस्कारों में भी गीत गाये जाते हैं, जबकि अन्तिम संस्कार के अवसर पर गीत गाने की परम्परा विद्यमान है, जिसमें मृतक के गुणों का वर्णन गीतों के माध्यम से किया जाता है। उसी परिप्रेक्ष्य में लोक जीवन में मौसम सम्बन्धी गीत भी प्रचलित है। जैसे – कजली, चइता, सावनी आदि। इन्हें काले बादलों से घिरे आकाश के नीचे गाया जाता है। उसी तरह फाल्गुनमास में होली के गीत सार्वजनिक उत्सव के रूप में लोक जीवन में ख्यातिप्रद है, जिसे कबीरा गीत भी कहते हैं, जिसमें अपशब्दों का प्रयोग किया जाता है। जैसे – अररर अररर भइया सुनलेह मोर कबीर .....।

भारतीय संस्कृत में बहुत पुराने समय से हिन्दू धर्म के त्यौहार के रूप में नाग पूजा भी ख्याति प्रद है, जिसमें नाग देवता को प्रसन्न करने के लिए दूध लावा चढ़ाने का प्राविधान है और अभिषेक करके बड़े धूमधाम से इस त्यौहार को मनाया जाता है, जिसे नाग पंचमी का त्यौहार भी कहा जाता है। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में यह पर्व नाग जाति के सुरक्षित और संरक्षित करने के लिए इस रूप में मनाने का आशय है। नाग पंचमी का पर्व नाग देवता को अभिसिंचित करके एक प्रकार से हिन्दू एवं सनातन धर्म के लोग विश्व के किसी भू भाग में रहते हों, उत्सव को मनाने का एक प्रकार से श्री गणेश है।

भारत वर्ष धर्मप्राण देश रहा है। इसमें वैदिक काल से लेकर वर्तमान समय तक अनेक देवी–देवताओं की परिकल्पना मिलती है। मैक्समूलर ने वैदिक देवताओं का वर्गीकरण वहुदेववाद विशिष्ट देववाद और एकेश्वरवाद् में किया है। ब्लूमफिल्ड महोदय ने वैदिक देवताओं का वर्गीकरण प्रागैतिहासिक देवता, पारदर्शी देवता, अपारदर्शी देवता एवं अमूर्त देवता के रूप में किया है। इसके अतिरिक्त यास्क ने अन्तरिक्ष स्थानीय देवता, आकाश स्थानीय देवता, पृथ्वी स्थानीय देवता के रूप में वैदिक देवताओं का वर्गीकरण किया है। वैदिक काल में प्राकृतिक लोक देवियों की उपासना के क्रम में उषा, सरस्वती, रात्रि, तारा, अदिति, पृथ्वी, सरयू, गंगा–यमुना आदि देवियों से सम्बन्धित आख्यान प्राप्त होते है।

वैदिक परम्परा के वाद श्रमण धर्मों में जैन देव परम्परा में बौद्धिक मनोवृत्तियों की अपेक्षा एक सरल मार्ग को प्रस्तुत किया गया ,और उसकी उपासना के लिए एक नवीन सरल मार्ग प्रस्तुत किया गया, जिसे लोक में 'मह' कहा गया। डॉ0 वासुदेवशरण अग्रवाल ने 'लोक धर्म' नामक ग्रन्थ में 'इन्द्रमह' का विस्तृत विवरण दिया है। 'इन्द्रमह' की भॉति ही स्कन्दमह पूजा प्रचलित थी, जिसमें स्कन्द (कार्तिकेय) की प्रतिमा बनायी जाती है।

बौद्ध साहित्य में लोक देवी में श्री सिरिमा' की पूजा सभी वर्ग के लोग करते थे। भरहुत के तोरण द्वारों पर श्री को कमलासन पर आरूढ़ प्रदर्शित किया गया है। लोक जीवन में यक्ष, नाग, सर्प, वृषभ, गौ, वृक्ष आदि की पूजा देवरूप में की जाती थी। विनयपिटक में उल्लेख है कि भगवान बुद्ध ने निर्देश दिया कि नाग के राजकुलों की पूजा

करें। लोक देवी के रूप में महाशक्ति का प्रथम नाम अम्बिका का नाम वाजसनेयी संहिता एवं शतपथ ब्राह्मण में मिलता है। रामायण एवं पुराणों में दुर्गा का उल्लेख प्राप्त होता है। अदिति को ऋग्वेद में देवों के समूह आदित्यगण की माता होने के कारण बहुत महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। भारतीय वाङ्ग्मय में विद्या की अधिष्ठात्री देवी के रूप में मॉ सरस्वती की आराधना प्रचलित हैं। गंगा – यमुना को हिन्दू धर्म में जल देवी के रूप में मान्यता दी गयी है, जिसे शिव अपने जटाओं में धारण करते हैं।

भारत में वृक्ष की पूजा बहुत ही प्राचीन है, जिसने धर्म के उच्च प्रकार को जन्म दिया हैं। भारतीय लोक धर्म में अश्वत्थ एवं पीपल का पूजा प्रचलित रही है। सूर्य, उपासना की परम्परा विश्व की अनेक प्राचीन संस्कृतियों में प्रचलित रही है। कुषाण शासक कनिष्क की मुद्राओं सूर्य का अंकन मिलता है।

पूर्वी उत्तर प्रदेश के अनेक स्थलों से ध्यानी बुद्ध, अमिताभ, अवलोकितेश्वर, बोधिसत्व की प्रतिमायें प्राप्त हुई हैं। छठी शताब्दी ई0 की काशी से कायोत्सर्ग की मुद्रा में निर्मित महावीर की मूर्ति मिली है। इसके अतिरिक्त महाकाली यक्षी की मूर्ति देवगढ़ और खजुराहों से मिली है।

पूर्वी उत्तर प्रदेश से शक्ति के प्रतीक विभिन्न देवियों की मूर्ति मिली है जो सरस्वती, वाराही, महिषमर्दिनी, चक्रेश्वरी, मातृ देवी की मूर्ति नाम से प्रसिद्ध है।

उपरोक्त विवरणों के आधार पर निष्कर्ष रूप में यह कहना उचित है कि भारतीय संस्कृति में वैदिक धर्म की विभिन्न मान्यतायें आज भी पूर्वी उत्तर प्रदेश में विभिन्न लोक देवी, देवताओं की उपासना एवं लोक जीवन में परम्परा के रूप में सुरक्षित है और इनकी पुष्टि साहित्यिक एवं पुरातात्विक साक्ष्यों से होती है।

□□□□□